पाठ - 14

बूढ़ी पृथ्वी का दुख

कवयित्री - निर्मला पुतुल

प्रस्तावना

यह सच है कि स्वच्छ जल, स्वच्छ वायु और हरा–भरा वातावरण हमारे दिल–दिमाग को तरोताज़ा कर देता है। सुन्दर प्राकृतिक दृश्य हमारे मन को खुशी से भर देते है लेकिन आज स्वच्छ जल, स्वच्छ वायु, और सुन्दर प्राकृतिक दृश्य कम होते जा रहे हैं। जानते हैं क्यों ? क्योंकि मनुष्य इनका उपयोग बड़ी बेहरमी से कर रहा है। क्या पेड़ों को काटे जाने पर उनके रोने की आवाज़ आपने सुनी है? चौंक गए न? पर चौंकिए मत, आज प्रकृति अपने संरक्षण के लिए हमें पुकार रही है। इस पुकार को हमें भी उसो तरह सुनना चाहिए जैसे एक **कवयित्री** ने इस कविता में सुना है, आइए जानते है।

क्या तुमने कभी सुनी है
सपनों में चमकती कुल्हाड़ियों के भय से
पेड़ों की चीत्कार?
कुल्हाड़ियों के **वार** सहते
किसी पेड़ की हिलती टहनियों में
दिखाई पड़े हैं तुम्हें
बचावे के लिए पुकारते हजारों–हजार हाथ?
क्या, होती है तुम्हारे भीतर धमस
कटकर गिरता है जब कोई पेड़ धरती पर?
सुना है कभी
रात के सन्नाटे में **अँधेरे में मुँह ढाँप**
किस कदर रोती हैं **नदियाँ**

इस घाट अपने कपड़े और मवेशी धोवे
सोचा है कभी कि उस घाट
पी रहा होगा कोई प्यासा पानी
या कोई स्त्री चढ़ा रही होगी किसी देवता को अर्घ्य?
कभी महसूस किया कि किस कदर दहलता है
मौन समाधि लिए बठे पहाड़ का सीना
विस्फोट से टूटकर जब छिटकता दूर तक, कोई पत्थर?
सुनाई पड़ी है कभी भरी दुपहरिया में
हथौड़ों की चोट से टूटकर बिखरते पत्थरों की **चींख** ?

ख़ून की उल्टि**याँ** करते
देखा है कभी हवा को, अपने घर के पिछवाड़े?
थोड़ा–सा वक्त चुराकर बतियाया है कभी
कभी शिकायत न करने वाली
गुमसुम बूढ़ी पृथ्वी से उसका दुख ?
अगर नहीं, तो क्षमा करना!
मुझे तुम्हारे आदमी होने पर संदे**ह** है!

सप्रसंग - प्रस्तुत पंक्तियाँ हमारी हिंदी की पाठ्य पुस्तक की कविता 'बूढी पृथ्वी का दुःख' से ली गई है |

कवयित्री कहती है कि सही मायने में मनुष्य वह है, जो अपने स्वार्थ को छोड़कर भय से चीखतें पेड़ों के दुख को महसूस करे और इन्हें बचाने का प्रयास करें।

व्याख्या - **कवयित्री** कल्पना करती है कि मनुष्य की तरह पेड़ भी भयभीत होते हैं। वे भय से चीखते–चिल्लाते भी है। वे भी बचाव के लिए पुकारते हैं। जैसे हम भयानक सपने देखते हैं, तो डर से पडते हैं, वैसे ही पेड़ों **को भी आतें है** । वे सपने बड़े भयानक हैं। उनके सपनों में चमकती हुई कुल्हाड़ि**याँ** पेड़ों को काटने के लिए तत्पर हैं और पेड़ इन कुल्हाड़ियों के डर से **चींख** रहे हैं। कविता की इन पंक्तियों में कुछ प्रश्न पूछे गए हैं। **कवयित्री** पेड़ों के पक्ष में ये सवाल पूछ रही है। उसके सवाल उस 'सभ्य' समाज से है, जो पेड़ों के साथ नहीं जीता, बल्कि पेड़ों को अपने उपयोग के लिए नष्ट करता है। ये प्रश्न हम सबसे भी किए गए हैं।

विशेष - इसकी भाषा सरल एवं सुबोध है और पढ़ने में रूचिपूर्ण है |

सही मायने में मनुष्य वह है, जो अपने स्वार्थ को छोड़कर भय से चीखतें पेड़ों के दुख को महसूस करे और इन्हें बचाने का प्रयास करें।

(2) सुना है कभी ..... देवता को अर्ध्य?

संदर्भ - प्रस्तुत पंक्तियाँ हमारी हिंदी की पाठ्य पुस्तक की कविता 'बूढी पृथ्वी का दुःख' से ली गई है |

प्रसंग इन पंक्तियों में **कवयित्री** धरती की जीवन रेखा अर्थात् नदियों के दुख को प्रकट करती है।

व्याख्या - ये पंक्तियाँ किसक दुख को प्रकट करती हैं? जी **हाँ !** ये हमारी धरती की जीवन रेखा अर्थात् नदियों के दुख को व्यक्त करती हैं। जिस तरह पेड़ अपने फल दूसरों को दे देते हैं, वैसे ही **नदियाँ** भी अपना जल दूसरों को सौंप देती हैं। वे अपने जल के **रूप** में हमें जीवन देती है पर हम उन्हें ही बरबाद **बर्बाद** कर रहे है। आपने देखा होगा कि बड़े–बड़े कारखानों का गंदा पानी नदियों में गिराया जाता है। कूड़ा भी नदियों में डाल दिया जाता हैं । श्रद्धा तथा धर्म के नाम पर लोग नदियों में एसी चीजें बहाते हैं जिनसे **नदियाँ** गंदगी से भर जातो हैं। प्रतिबंध के बाद भी साबुन लगाकर नहाते है। जो नदि**याँ** कभी स्वच्छ पानी को लेकर कल–कल करती बहती थी, आज वे गंदे नाले बनकर रह गई है। **कवयित्री** इसी बात से दुखी है। वह **हम** सबसे पूछती है सुना है कभी रात के सन्नाटे में **अँधेरे में मुँह ढाँप** किस कदर रोती है नदि**याँ**। **कवयित्री** ने नदी के दो किनारों का वर्णन किया है। एक किनारा वह है, **जहाँ** पर कोई स्वार्थी व्यक्ति अपने मवेशी को नहला रहा है और कोई साबुन से अपने मैले कपड़े धो रहा है तो दूसरे किनारे पर कोई प्यासा पानी पी रहा है और कोई स्त्री देवता को अर्द्ध दे रही है। इस कारण **कवयित्री** लोगों से प्रश्न पूछकर उनके व्यवहार के लिए उन्हें शर्मिंदा करना चाहती है।

विशेष :**इसकी भाषा सरल एवं सुबोध है और पढ़ने में रूचिपूर्ण है |**

कवयित्री जल संरक्षण का संदेश देना चाहती है।

(3) कभी महसूस किया ..... घर के पिछवाड़े

संदर्भ : **प्रस्तुत पंक्तियाँ हमारी हिंदी की पाठ्य पुस्तक की कविता 'बूढ़ी पृथ्वी का दुःख' से ली गई है |**

प्रसंग : इस पंक्तियों में **कवयित्री** ने पहाड़ों **के** यातना को महसूस करने का आग्रह किया है।

व्याख्या : इस अंश में पहाड़ की भयंकर यातना को महसूस करने का आग्रह किया गया है। आपने मनुष्य के लिए दिल दहला देने का प्रयोग सुना ही होगा। जब कोई भयानक स्थिति या विपत्ति आती है तो उसे देखकर या उसका सामना करते हुए व्यक्ति का दिल दहलता है | अर्थात् वह भीतर तक हिल जाता है या **काँप** जाता है। पहाड़ की स्थिरता को देखकर

लगता है, जैसे वह मौन समाधि में बैठा हो। अनेक चित्रों में अपने ऋषि मुनियों को इस तरह बैठे देखा होगा। पहाड़ भी इस मुद्रा में बैठे दिखते हैं न? **कवयित्री** की इस सुन्दर कल्पना को असुन्दर बनाता है–मनुष्य का पहाड़ के साथ किया गया व्यवहार मनुष्य एक तरफ निर्माण करता है तो दूसरी तरफ विनाश भी करता है। **ऊँची-ऊँची** इमारतें बनाने के लिए पत्थर, सीमेंट आदि को पहाड़ में डाइनामाइट लगाकर उसमें विस्फोट करता है। जब वह फटता है तो ऐसा लगता है मानो मनुष्य के इस व्यवहार से उसका सीना दहल गया हो। आपने सुना होगा कि खून की **उल्टियाँ** एक भयंकर रोग का लक्षण होती हैं। वह भयंकर रोग है टी.बी.। यह रोग तब होता है, जब फेफड़ों को स्वच्छ वायु न मिले। वायु प्रदूषण से खुद वायु ही रोगी हो जाती है, इसीलिए **कवयित्री** ने खून की **उल्टियाँ** करते दिखाया है।

विशेष : **इसकी भाषा सरल एवं सुबोध है और पढ़ने में रुचिपूर्ण है।**

मानवीकरण अलंकार का सुन्दर प्रयोग व्यक्तिगत स्वार्थ प्राकृतिक संसाधनों का सबसे बड़ा दुश्मन है।

(4) थोड़ा सा वक्त..... पर संदेह है।

संदर्भ : इन पंक्तियों में कवियत्री ने पृथ्वी को बूढ़ी औरत के रूप में प्रस्तुत करते हुए उसके दुख को प्रकट किया है।

व्याख्या : आजकल अधिकतर लोग ज्यादा से ज्यादा **सुविधाएँ** प्राप्त करने की होड़ में व्यस्त हैं। इसी के चलते उन लोगों ने अपने लिए अनेक उलझने खड़ी कर ली हैं। अब उनके पास बेहद जरूरी कार्यों के लिए भी समय नहीं है। इसका प्रभाव पूरे परिवार पर पड़ता है। अपने आसपास के कुछ घरों में बुजुर्गों को देखें–उन्होंने अपनी संतान को पाल पोषकर बड़ा किया और अब उनकी संतान के पास इतना भी समय नहीं है कि वह उनकी देखभाल और सवा कर सके, उनसे बात करके उनका दुख–सुख पूछे। ऐसे में ये बड़े–बूढ़े बहुत उदास चुप तथा दुखी रहते हैं। इन बुजुर्गों की तरह हमारी पृथ्वी की भी यही स्थिति हो गई है।

विशेष : **इसकी भाषा सरल एवं सुबोध है और पढ़ने में रुचिपूर्ण है।**

मानवीकरण अलंकार, प्रकृति के दुख का चित्रण, संज्ञा, सर्वनाम आदि का प्रयोग ज्यादा किया गया है।

सारांश

इस कविता में कुछ सुनने, देखने, महसूस करने, सोचने और थोड़ा सा समय निकालकर बतियाने का आग्रह किया गया है, भला किनके बारे में? जाहिर है कि पेड़ नदी, पहाड़, हवा के बारे मे और मूल रूप से उस पृथ्वी के बारे में, जिसके ये सब अवयव हैं। पेड़ विपत्ति में है नदी..... पहाड़ धैर्यवान सज्जन के रूप में है, हवा रोगी है तो पृथ्वी बूढ़ी। आप जानते हैं कि मनुष्य को प्रकृति की सर्वोत्तम रचना माना गया है। क्यों, इसलिए क्योंकि मनुष्य के पास बुद्धि है, विवेक है और सहनशीलता। इसी सहनशीलता के चलते मानव मूल्यों का निर्माण हुआ है। विपत्ति में पड़े हुए, सज्जन, रोगी और बुजुर्ग की रक्षा करना उनको सेवा करना मानव धर्म है। **कवयित्री** कहती **हैं** कि यदि तुमने यह सब नहीं किया तो क्षमा करना मुझे तुम्हारे आदमी होने पर संदेह है। जानते हैं ऐसा **कवयित्री** ने क्यों कहा? क्योंकि मनुष्य से ही आशा की जाती है कि वह पृथ्वी का दुख समझे ऐसी संवेदनशीलता मनुष्य में ही होती है।

जीवन परिचय

निर्मला पुतुल

जन्म : निर्मला पुतुल का जन्म 1972 में एक संथाली आदिवासी परिवार में हुआ था।

शिक्षा : निर्मला पुतुल ने अपने जन्म स्थान पर रहकर ही अपनी सम्पूर्ण शिक्षा ग्रहण की है।

रचनाएँ : नगाड़े की तरह बजते शब्द। बूढ़ी पृथ्वी का दुख **आदि** ।

साहित्य में स्थान

प्रकृति तथा आदिवासी समाज को इन्होंने साहित्य में एक विशेष स्थान दिया है।

आज के वैश्विक सभ्यता तथा उपभोक्तावाद के दौर में ये दोनों ही संकटग्रस्त हैं।